17. पाजेब

जैनेन्द्र कुमार

लेखक परिचय –

प्रेमचन्दोत्तर युग के प्रसिद्ध विचारक, उपन्यासकार, कथाकार और निबन्धकार श्री जैनेन्द्र कुमार का जन्म सन् 1905 ई. में अलीगढ़ (उ.प्र.) के कौड़ियागंज नामक कस्बे में हुआ था। पिता का नाम प्यारेलाल एवं माता का नाम श्रीमती रामदेवी था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा जैन गुरुकुल हस्तिनापुर में हुई। व्यक्तिगत रूप से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए काशी विश्वविद्यालय आए परन्तु महात्मा गांधी के सन् 1921 के आंदोलन का इन पर इतना प्रभाव पड़ा कि ये अध्ययन छोड़कर आंदोलन के उत्साही कार्यकर्ता बन गए।

जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों के द्वारा हिन्दी में एक सशक्त मनोवैज्ञानिक कथा-धारा का प्रवर्तन किया। कथाकार के साथ-साथ इनकी पहचान एक सशक्त अत्यन्त गम्भीर चिन्तक के रूप में रही है। इन्होंने साहित्य, समाज, धर्म, संस्कृति, राजनीति, दर्शन आदि से सम्बन्धित विषयों को बहुत सरल एवं अनौपचारिक सी दिखाई देने वाली शैली में प्रस्तुत किया। इनकी लगभग दो सौ कहानियाँ हैं जो 'जैनेन्द्र की श्रेष्ठ कहानियाँ' नाम से आठ भागों में प्रकाशित हो चुकी हैं। जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में मनुष्य की आंतरिक समस्याओं का सूक्ष्म चित्रण किया है जिससे इनकी कहानियों को एक नई अन्तर्दृष्टि, संवेदनशीलता और दर्शन की गम्भीरता प्राप्त हुई है। इन्होंने हिन्दी कहानी को परम्परागत शिल्प के स्थान पर नवीन शिल्प और शैली प्रदान की। इन पर गांधीवादी दर्शन का पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

जैनेन्द्र की प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं – 'परख', 'सुनीता', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी', 'विवर्त', 'सुखदा', 'अनाम स्वामी', 'जयवर्धन', 'मुक्तिबोध (उपन्यास)', 'फाँसी', 'जयसन्धि', 'वातायान', 'नीलम देश की राजकन्या', 'एक रात', 'दो चिड़ियाँ', 'पाजेब' (कहानी संग्रह), 'प्रस्तुत प्रश्न', 'जड़ की बात', 'पूर्वोदय', 'साहित्य का श्रेय और प्रेय', 'सोच विचार', 'समय और हम', 'विचार वल्लरी', 'प्रेम और परिवार', 'राष्ट्र और राज्य (निबन्ध संग्रह), 'ये और वे', (संस्मरण); 'मन्दालिनी', 'पाप और प्रकाश', (नाटक)। प्रमुख पुरस्कार– साहित्य अकादमी पुरस्कार, 'भारत-भारती, सम्मान। भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से सम्मानित।

पाठ–परिचय–

'पाजेब' बाल–मनोविज्ञान पर आधारित सजीव, रोचक, सशक्त एवं मार्मिक कहानी है। इस कहानी में मुन्नी की पाजेब खो जाती है। इस पर उसके भाई आशुतोष को अपराधी समझा जाता है। वह अबोध अवस्था होने के कारण अपनी स्थिति स्पष्ट नहीं कर पाता। झूठ बोलने के अपराध में उसे सजा मिलती है और अन्त में बुआ के आने पर स्थिति स्पष्ट होती है कि पाजेब बुआ के साथ चली गई थी और बालक निरपराध प्रमाणित होता है। इस प्रकार कहानी का उद्देश्य बाल-मनोविज्ञान का चित्रण करना है। बालक अबोध होते हैं। उनकी कोमल बुद्धि तर्कहीन होती है। वे अपनी बात स्पष्ट नहीं कर पाते। स्नेह, भय और प्रलोभन के कारण अपराधी न होने पर भी वे अपराध स्वीकार कर लेते हैं। आशुतोष की यही स्थिति है। उसने

न पाजेब चुराई, न छुन्नू को दी और न पतंग वाले को बेची। फिर भी वह पिता के सामने स्थिति स्पष्ट नहीं कर पाने के कारण अपराधी बन जाता है। एक-एक कर सारे अपराध स्वीकार कर लेता है; परन्तु अन्त में निरपराधी सिद्ध होता है।

मूलपाठ –

बाजार में एक नई तरह की पाजेब चली है। पैरों में पड़कर वे बड़ी अच्छी मालूम होती हैं। उनकी कड़ियाँ आपस में लचक के साथ जुड़ी रहती हैं कि पाजेब का मानो निज का आकार कुछ नहीं है, जिस पाँव में पड़े उसी से अनुकूल ही रहती है।

पास-पड़ोस में तो सब नन्हीं–बड़ी के पैरों में आप वही पाजेब देख लीजिए। एक ने पहनी तो दूसरी ने भी पहनी। देखा–देखी में इस तरह उनका न पहनना मुश्किल हो गया है।

हमारी मुन्नी ने भी कहा कि बाबूजी, हम पाजेब पहनेंगे। बोलिए भला कठिनाई से चार बरस की उम्र और पाजेब पहनेगी।

मैंने कहा कि कैसी पाजेब ?

बोली कि हाँ, वही जैसी रुक्मिन पहनती है, जैसी शीला पहनती है।

मैंने कहा कि अच्छा-अच्छा!

बोली कि मैं तो आज ही मँगा लूँगी।

मैंने कहा कि अच्छा भाई, आज ही सही।

उस वक्त तो खैर मुन्नी किसी काम में बहल गई; लेकिन जब दोपहर आई मुन्नी की बुआ, तब वह मुन्नी सहज मानने वाली न थी।

बुआ ने मुन्नी को मिठाई खिलाई और गोद में लिया और कहा कि अच्छा, तो तेरी पाजेब अब के इतवार को जरूर लेती आऊँगी।

इतवार को बुआ आई और पाजेब ले आई। मुन्नी उन्हें पहनकर खुशी के मारे यहाँ से वहाँ छमकती फिरी। रुक्मिन के पास गई और कहा देख रुक्मिन मेरी पाजेब। शीला को भी अपनी पाजेब दिखाई। सबने पाजेब पहनी देखकर उसे प्यार किया और तारीफ की। सचमुच वह चाँदी की सफेद दो-तीन लड़ियाँ-सी टखनों के चारों ओर लिपटकर, चुपचाप बिछी हुई ऐसी सुघड़ लगती थीं कि बहुत ही, और बच्ची की खुशी का ठिकाना न था।

और हमारे महाशय आशुतोष, जो मुन्नी के बड़े भाई थे, पहले तो मुन्नी को सजी–बजी देखकर बड़े खुश हुए। वह हाथ पकड़कर अपनी बढ़िया मुन्नी को पाजेब-सहित दिखाने के लिए आस–पास ले गए। मुन्नी की पाजेब का गौरव उन्हें अपना भी मालूम होता था। वह खूब हँसे और ताली पीटी, लेकिन थोड़ी देर बाद वह ठुमकने लगे कि मुन्नी को पाजेब दी, सो हम बाईसिकिल लेंगे।

बुआ ने कहा कि अच्छा बेटा, अबके जन्मदिन पर तुझे भी बाईसिकिल दिलवाएँगे।

आशुतोष बाबू ने कहा कि हम तो अभी लेंगे।

बुआ ने कहा, ''छी-छी, तू कोई लड़की है? ज़िद तो लड़कियाँ करती हैं और लड़कियाँ रोती हैं।

कहीं बाबू साहब लोग रोते हैं!''

आशुतोष बाबू ने कहा कि हम बाईसिकिल जरूर लेंगे जन्मदिन वाले रोज।

बुआ ने कहा कि हाँ, यह बात पक्की रही, जन्मदिन पर तुमको बाईसिकिल मिलेगी।

इस तरह वह इतवार का दिन हँसी-खुशी पूरा हुआ। शाम होने पर बच्चों की बुआ चली गई। पाजेब का शौक घड़ी-भर का था। वह फिर उतारकर रख–रखा दी गई, जिससे कहीं खो न जाए। पाजेब वह बारीक और सुबुक काम की थी और खासे दाम लग गए थे।

श्रीमती ने हम से कहा कि क्यों जी, लगती तो अच्छी है, मैं भी एक बनवा लूँ ?

मैंने कहा कि क्यों न बनवाओ! तुम कौन चार बरस की नहीं हो!

खैर, यह हुआ। पर मैं रात को अपनी मेज पर था कि श्रीमती ने आकर कहा कि तुमने पाजेब तो नहीं देखी?

मैंने आश्चर्य से कहा कि क्या मतलब ?

बोलीं कि देखो, यहाँ मेज-वेज पर तो नहीं है। एक तो उसमें की है, पर दूसरे पैर की मिलती ही नहीं है। जाने कहाँ गई ?

मैंने कहा कि जाएगी कहाँ? यहीं-कहीं देख लो। मिल जाएगी।

उन्होंने मेरी मेज के कागज उठाने-धरने शुरू किए और अलमारी की किताबें टटोल डालने का भी मनसूबा दिखाया।

मैंने कहा कि यह क्या कर रही हो ? यहाँ वह कहाँ से आई ?

जवाब में वह मुझी से पूछने लगीं कि फिर कहाँ हैं ?

मैंने कहा कि तुमने ही तो रखी होगी। कहाँ रखी थी ?

बतलाने लगीं कि मैंने दोपहर के बाद कोई दो बजे उतारकर दोनों अच्छी तरह संभालकर उस नीचे वाले बक्स में रख दी थीं। अब देखा तो एक है, दूसरी गायब है।

मैंने कहा कि तो चलकर वह इस कमरे में कैसे आ जाएगी ? भूल हो गई होगी। एक रखी होगी एक वहीं-कहीं फर्श पर छूट गई होगी। देखो, मिल जाएगी। कहीं जा नहीं सकती।

इस पर श्रीमती कहा-सुनी करने लगीं तो तुम तो ऐसे ही हो। खुद लापरवाह हो, दोष उल्टे मुझे देते हो। कह तो रही हूँ कि मैंने दोनों संभालकर रखी थीं।

मैंने कहा कि संभाल कर रखी थी तो फिर यहाँ-वहाँ क्यों देख रही हो ? जहाँ रखी थी वहाँ से ले लो न। वहाँ नहीं है तो फिर किसी ने निकाली ही होगी।

श्रीमती बोलीं कि मेरा भी यही खयाल हो रहा है। हो न हो, बंसी नौकर ने निकाली है। मैंने रखी, तब वह वहाँ मौजूद था।

मैंने कहा कि तो उससे पूछा ?

बोली कि वह तो साफ इन्कार करता है।

मैंने कहा कि तो फिर ?

श्रीमती जोर से बोलीं कि तो फिर मैं क्या बताऊँ ? तुम्हें तो किसी बात की फिकर है ही नहीं। डाँटकर कहते क्यों नहीं हो, उस बंसी को बुलाकर ?जरूर पाजेब उसी ने ली है।

मैंने कहा कि अच्छा, तो उसे क्या कहना होगा ? यह कहूँ कि ला भाई, पाजेब दे दे!

श्रीमती झल्लाकर बोलीं कि हो चुका बस कुछ तुमसे! तुम्हीं ने तो उस नौकर की जात को शहजोर बना रखा है। डाँट न फटकार, नौकर ऐसे सिर न चढ़ेगा तो क्या होगा ?

मैंने पूछा कि तो तुम्हारा क्या ख्याल है ?

बोलीं कि कह तो रही हूँ कि किसी ने उसे बक्स में से निकाला ही है और सोलह में पंद्रह आने यह बंसी है। सुनते हो न, वही है।

मैंने कहा कि मैंने बंसी से पूछा था। उसने नहीं ली मालूम होती।

इस पर श्रीमती ने कहा कि तुम नौकरों को नहीं जानते। वे बड़े छँटे होते हैं। जरूर बंसी ही चोर है। नहीं तो क्या फरिश्ते लेने आते ?

मैंने कहा कि तुमने आशुतोष से भी पूछा ?

बोलीं कि पूछा था। वह तो खुद ट्रंक और बक्स के नीचे घुस-घुस-कर खोज लगाने से मेरी मदद करता रहा। वह नहीं ले सकता।

मैंने कहा कि उसे पतंग का बड़ा शौक है।

बोलीं कि तुम तो उसे बताते-बरजते कुछ हो नहीं। उमर होती जा रही है। वह यों ही रह जाएगा। तुम्हीं हो उसे पतंग की शह देने वाले।

मैंने कहा कि जो कहीं पाजेब ही पड़ी मिल गई हो तो ?

बोलीं कि नहीं, नहीं, नहीं! मिलती तो वह बता न देता ?

खैर, बातों–बातों में मालूम हुआ कि उस शाम आशुतोष पतंग और एक डोर का पिन्ना नया लाया है।

श्रीमती ने कहा कि यह तुम्हीं हो जिसने पतंग की उसे इजाजत दी। बस सारे दिन पतंग-पतंग! यह नहीं कि कभी उसे बिठाकर सबक की भी कोई बात पूछो। मैं सोचती हूँ कि एक दिन तोड़–ताड़ दूँ उसकी सब डोर और पतंग। हाँ, तो सारे वक्त वही धुन!

मैंने कहा कि खैर, छोड़ो। कल सवेरे पूछताछ करेंगे।

सवेरे बुलाकर मैंने गंभीरता से उससे पूछा कि क्यों बेटा, एक पाजेब नहीं मिल रही है, तुमने तो नहीं देखी?

वह गुम हो आया, जैसे नाराज हो। उसने सिर हिलाया कि उसने नहीं ली। पर मुँह नहीं खोला।

मैंने कहा कि देखो बेटे, ली हो तो कोई बात नहीं, सच कह देना चाहिए।

उसका मुँह और भी फूल आया और वह गुम-सुम बैठ रहा।

मेरे मन में उस समय तरह–तरह के सिद्धान्त आए। मैंने स्थिर किया कि अपराध के प्रति करुणा ही

होनी चाहिए, रोष का अधिकार नहीं है। प्रेम से ही अपराध-वृत्ति को जीता जा सकता है। आतंक से उसे दबाना ठीक नहीं है। बालक का स्वभाव कोमल होता है और सदा ही उससे स्नेह से व्यवहार करना चाहिए।

मैंने कहा कि बेटा आशुतोष, तुम घबराओं नहीं। सच कहने में घबराना नहीं चाहिए। ली हो तो खुलकर कह दो, बेटा! हम कोई सच कहने की सजा थोड़े ही दे सकते हैं! बल्कि सच बोलने पर तो इनाम मिला करता है।

आशुतोष सब सुनता हुआ बैठा रह गया। उसका मुँह सूजा था। वह सामने मेरी आँखों में नहीं देख रहा था। रह–रहकर उसके माथे पर बल पड़ते थे।

''क्यों बेटे, तुमने ली तो नहीं ?''

उसने सिर हिलाकर, क्रोध से अस्थिर और तेज आवाज़ में कहा कि मैंने नहीं ली, नहीं ली, नहीं ली। यह कहकर वह रोने को हो आया, पर रोया नहीं। आँखों में आँसू रोक लिए।

उस वक्त मुझे प्रतीत हुआ उग्रता दोष का लक्षण है।

मैंने कहा कि बेटा, डरो नहीं। अच्छा जाओं, ढूँढो; शायद कहीं पड़ी हुई वह पाजेब मिल जाए। मिल जाएगी तो हम तुम्हें इनाम देंगे।

वह चला गया और दूसरे कमरे में जाकर पहले तो एक कोने में खड़ा हो गया। कुछ देर चुपचाप खड़े होकर वह फिर यहाँ-वहाँ पाजेब की तलाश में लग गया।

श्रीमती आकर बोली कि आशु से तुमने पूछताछ लिया ?क्या ख्याल है ?

मैंने कहा कि संदेह तो मुझे होता है। नौकर का काम तो यह है नहीं।

श्रीमती ने कहा कि नहीं जी, आशु भला क्यों लेगा?

मैं कुछ बोला नहीं। मेरा मन जाने कैसा गंभीर प्रेम के भाव से आशुतोष के प्रति उमड़ रहा था। मुझे मालूम होता था कि ठीक इस समय आशुतोष को हमें अपनी सहानुभूति से वंचित नहीं करना चाहिए, बल्कि कुछ अतिरिक्त स्नेह इस समय बालक को मिलना चाहिए। मुझे यह एक भारी दुर्घटना मालूम होती थी। मालूम होता था कि अगर आशुतोष ने चोरी की है तो उसका इतना दोष नहीं है, बल्कि यह हमारे ऊपर बड़ा भारी इलज़ाम है। बच्चे में चोरी की आदत भयावह हो सकती है। लेकिन बच्चे के लिए वैसी लाचारी उपस्थित हो आई, यह और भी कहीं भयावह है। यह हमारी आलोचना है। हम उस चोरी से बरी नहीं हो सकते।

मैंने बुलाकर कहा, ''अच्छा, सुनो। देखो, मेरी तरफ देखो, यह बताओ कि पाजेब तुमने छुन्नू को दी है न?''

वह कुछ देर नहीं बोला। उसके चेहरे पर रंग आया और गया। मैं एक-एक छाया ताड़ना चाहता था।

मैंने आश्वासन देते हुए कहा कि कोई बात नहीं। हाँ, हाँ, बोलो, डरो नहीं। ठीक बताओ, बेटे! कैसा हमारा सच्चा बेटा है।

मानो बड़ी कठिनाई के बाद उसने अपना सिर हिलाया।

मैंने बहुत खुश होकर कहा कि दी है न छुन्नू को ?

उसने सिर हिला दिया।

अत्यंत सांत्वना के स्वर में स्नेहपूर्वक मैंने कहा कि मुँह से बोलो– छुन्नू को दी है ?

उसने कहा, ''हाँ-आँ।''

मैंने अत्यंत हर्ष के साथ दोनों बाँहों में लेकर उसे उठा लिया। कहा कि ऐसे ही बोल दिया करते हैं अच्छे लड़के। आशु हमारा राजा बेटा है। गर्व के भाव से गोद में लिए-लिए मैं उसकी माँ की तरफ गया। उल्लासपूर्वक बोला कि देखो, हमारे बेटे ने सच कबूल किया है। पाजेब उसने छुन्नू को दी है।

सुनकर माँ उसकी खुश हो आई; उन्होंने उसे चूमा। बहुत शाबाशी दी और उसकी बलैयाँ लेने लगीं।

आशुतोष भी मुसकरा आया। अगरचे एक उदासी भी उसके चेहरे से दूर नहीं हुई थी।

उसके बाद अलग ले जाकर मैंने उससे बड़े प्रेम से पूछा कि पाजेब छुन्नू के पास है न ? जाओ, माँग ला सकते हो उससे ?

आशुतोष मेरी ओर देखता हुआ बैठा रह गया। मैंने कहा कि जाओ बेटे! ले आओ।

उसने जवाब में मुँह नहीं खोला।

मैंने आग्रह किया तो वह बोला कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो वह कहाँ से देगा ?

मैंने कहा कि तो जिसको उसने दी होगी उसका नाम बता देगा। सुनकर वह चुप हो गया। मेरे बार-बार कहने पर वह यही कहता रहा कि पाजेब छुन्नू के पास न हुई तो वह देगा कहाँ से ?

अंत में हारकर मैंने कहा कि वह कहीं तो होगी। अच्छा तुमने कहाँ से उठाई थी ?''

''पड़ी मिली थी ?''

''और फिर नीचे जाकर वह तुमने छुन्नू को दिखाई ?''

''हाँ!''

''फिर उसी ने कहा कि इसे बेचेंगे ?''

''हाँ!''

''कहाँ बेचने को कहा ?''

''कहा, मिठाई लाएँगे।

''नहीं पतंग लाएँगे।''

''अच्छा पतंग को कहा ?''

''हाँ!''

''तो उसी के पास होनी चाहिए न ? या पतंगवाले के पास होगी। होगी, जाओ बेटा, उससे ले आओ। कहना हमारे बाबूजी तुम्हें इनाम देंगे।''

वह जाना नहीं चाहता था। उसने फिर कहा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो कहाँ से देगा?

मुझे उसकी ज़िद बुरी मालूम हुई। मैंने कहा कि तो कहीं तुमने उसे गाड़ दिया है ? क्या किया है ? बोलते क्यों नहीं ?

वह मेरी ओर देखता रहा और कुछ नहीं बोला।

मैंने कहा कि कुछ कहते क्यों नहीं ?

वह गुम-सुम रह गया और नहीं बोला।

मैंने डपटकर कहा कि जाओ, जहाँ हो वहीं से पाजेब लेकर आओ।

जब अपनी जगह ने नहीं उठा और नहीं गया तो मैंने उसे कान पकड़कर उठाया। कहा कि सुनते हो! जाओ, पाजेब लेकर आओ, नहीं तो घर में तुम्हारा काम नहीं है।

उस तरह उठाया जाकर वह उठ गया और कमरे के बाहर निकल गया। निकलकर बरामदे के एक कोने में रूठा मुँह बनाकर खड़ा रह गया।

मुझे बड़ा क्षोभ हो रहा था। यह लड़का सच बोलकर अब किस बात से घबरा रहा है, यह मैं कुछ समझ न सका। मैंने बाहर आकर जरा धीरे से कहा कि जाओ भाई, जाकर छुन्नू से कहते क्यों नहीं हो ?

पहले तो उसने कोई जवाब नहीं दिया और जब जवाब दिया तो बार-बार कहने लगा कि छुन्नू के पास नहीं हुई तो कहाँ-से देगा ?

मैंने कहा कि जितने में उसने बेची होगी वह दाम दे देंगे। समझे न, जाओ, तुम कहो तो।

छुन्नू की माँ ने कहा कि उनका लड़का ऐसा काम नहीं कर सकता। उसने पाजेब नहीं देखी।

जिस पर आशुतोष की माँ ने कहा कि नहीं, तुम्हारा छुन्नू झूठ बोलता है। क्यों रे आशुतोष, तैने दी थी न ?

आशुतोष ने धीरे से कहा कि हाँ, दी थी।

दूसरी ओर छुन्नू बढ़कर आया और हाथ फटकारकर बोला कि मुझे नहीं दी। क्यों रे, मुझे कब दी थी ?

आशुतोष ने जिद बाँधकर कहा कि दी तो थी। कह दो, नहीं दी थी ?

नतीजा यह हुआ कि छुन्नू की माँ ने छुन्नू को खूब पीटा और खुद भी रोने लगी। कहती जाती कि हाय रे, अब हम चोर हो गए। यह कुलच्छिनी औलाद जाने कब मिटेगी ?

बात दूर तक फैल चली। पड़ोस की स्त्रियों में पवन पड़ने लगी और श्रीमती ने घर लौटकर कहा कि छुन्नू और उसकी माँ दोनों एक-से हैं। मैंने कहा कि तुमने तेजा-तेजी क्यों कर डाली ? ऐसे कोई बात भला कभी सुलझती है!

बोली कि हाँ, मैं तेज बोलती हूँ। अब जाओ ना, तुम्हीं उनके पास से पाजेब निकलकर लाते क्यों नहीं ? तब जानूँ अब पाजेब निकलवा दो।

मैंने कहा कि पाजेब से बढ़कर शांति है और अशांति से तो पाजेब मिल नहीं जाएगी।

श्रीमती बुदबुदाती हुई नाराज होकर मेरे सामने से चली गईं।

थोड़ी देर के बाद छुन्नू की माँ हमारे घर आई। श्रीमती उन्हें लाई थीं। अब उनके बीच गरमी नहीं

थी, उन्होंने मेरे सामने आकर कहा कि छुन्नू तो पाजेब के लिए इन्कार करता है। वह पाजेब कितने की थी, मैं उसके दाम भर सकती हूँ।

मैंने कहा, ''यह आप क्या कहती है। बच्चे, बच्चे हैं। आपने छुन्नू से सहूलियत से पूछा भी?''

उन्होंने उसी समय छुन्नू को बुलाकर मेरे सामने कर दिया। कहा कि क्यों रे, बता क्यों नहीं देता जो तैने पाजेब देखी हो ?

छुन्नू ने जोर से सिर हिलाकर इन्कार किया और बताया कि पाजेब आशुतोष के हाथ में मैंने देखी थी और वह पतंग वाले को दे आया है। मैंने खूब देखी थी। वह चाँदी की थी।

''तुम्हें ठीक मालूम है ?''

''हाँ, वह मुझसे कह रहा था कि तू भी चल, पतंग लाएँगे।''

''पाजेब कितनी बड़ी थी, बताओ तो ?''

छुन्नू ने उसका आकार बताया, जो ठीक ही था।

मैंने उसकी माँ की ओर देखकर कहा कि देखिए न, पहले यही कहता था कि मैंने पाजेब देखी तक नहीं। अब कहता है कि देखी है।

माँ ने मेरे सामने छुन्नू को खींचकर तभी धम्म-धम्म पीटना शुरू कर दिया। कहा कि क्यों रे, झूठ बोलता है? तेरी चमड़ी न उधेड़ी तो मैं नहीं।

मैंने बीच-बचाव करके छुन्नू को बचाया। वह शहीद की भाँति पिटता रहा था। रोया बिल्कुल नहीं था और एक कोने में खड़े आशुतोष को जाने किस भाव से वह देख रहा था।

खैर, मैंने सबको छुट्टी दी। कहा कि जाओ बेटा छुन्नू, खेलो! उसकी माँ को कहा कि आप उसे मारिएगा नहीं और पाजेब कोई ऐसी बड़ी चीज नहीं है।

छुन्नू चला गया। तब, उसकी माँ ने पूछा कि आप उसे कसूरवार समझते हो ?

मैंने कहा कि मालूम तो होता है कि उसे कुछ पता है और वह मामले में शामिल है।

इस पर छुन्नू की माँ ने पास बैठी हुई मेरी पत्नी से कहा, ''चलो बहनजी, मैं तुम्हें अपना सारा घर दिखाए देती हूँ। एक-एक चीज देख लो। होगी पाजेब तो जाएगी कहाँ ?''

मैंने कहा, छोड़िए भी। बेबात की बात बढ़ाने से क्या फायदा ?'' सो ज्यों-ज्यों मैंने उन्हें दिलासा दी। नहीं तो वह छुन्नू को पीट-पीटकर हाल–बेहाल कर डालने का प्रण ही उठाए ले रही थीं। ''कुलछने, आज तुझे धरती में नहीं गाड़ दिया, तो मेरा नाम नहीं।''

खैर, जिस-तिस भाँति बखेड़ा टाला। मैं इस झंझट में दफ्तर भी समय पर नहीं जा सका। जाते वक्त श्रीमती को कह गया कि देखा, आशुतोष को धमकाना मत। प्यार से सारी बातें पूछना। धमकाने से बच्चे बिगड़ जाते हैं और हाथ कुछ नहीं आता। समझीं न?

शाम को दफ्तर से लौटा तो श्रीमती ने सूचना दी कि आशुतोष ने सब-कुछ बतला दिया है। ग्यारह आने पैसे में वह पाजेब पतंगवाले को दे दी है। पैसे उसने थोड़े-थोड़े करके देने को कहे हैं। पाँच आने जो दिए वे छुन्नू के पास हैं। इस तरह रत्ती-रत्ती बात उसने कह दी है।

कहने लगीं कि मैंने बड़े प्यार से पूछ-पूछकर यह सब उसके पेट में से निकाला है। दो-तीन घंटे मैं मगज मारती रही। हाय राम, बच्चे का भी क्या जी होता है!

मैं सुनकर खुश हुआ। मैंने कहा कि चलो अच्छा है, अब पाँच आने भेजकर पाजेब मँगा लेंगे। लेकिन यह पतंग वाला भी कितना बदमाश है, बच्चों के हाथ से ऐसी चीजें लेता है। उसे पुलिस में दे देना चाहिए। उचक्का कहीं का!

फिर मैंने पूछा कि आशुतोष कहाँ है?

उन्होंने बताया कि बाहर ही कहीं खेल-खाल रहा होगा।

मैंने कहा कि बंसी, जाकर उसे बुला तो लाओ।

बंसी गया और उसने आकर कहा कि वह अभी आते हैं।

''क्या कर रहा है ?''

''छुन्नू के साथ गिल्ली-डंडा खेल रहे हैं।''

थोड़ी देर में आशुतोष आया। तब मैंने उसे गोद में लेकर प्यार किया। आते-आते उसका चेहरा उदास हो गया था और गोद में लेने पर वह विशेष प्रसन्न नहीं मालूम हुआ।

उसकी माँ ने खुश होकर कहा कि हमारे आशुतोष ने सब बातें अपने आप पूरी-पूरी बता दी है। हमारा आशुतोष बड़ा सच्चा लड़का है।

आशुतोष मेरी गोद में टिका रहा। लेकिन अपनी बड़ाई सुनकर भी उसको कुछ हर्ष नहीं हुआ प्रतीत होता था।

मैंने कहा कि आओ, चलो अब क्या बात है ? क्यों हजरत, तुमकों पाँच ही आने तो मिले हैं न ? हमसे पाँच आने माँग लेते तो क्या हम न देते ? सुना, अब से ऐसा मत करना, बेटे!

कमरे में ले जाकर मैंने फिर पूछताछ की, ''क्यों बेटा, पतंगवाले ने पाँच आने तुम्हें दिए थे न ?''

''हाँ।''

''और वे छुन्नू के पास हैं ?''

''हाँ।''

''अभी तो उसके पास होंगे न ?''

''नहीं।''

''खर्च कर दिए ?''

''नहीं।'' खर्च किए ?''

''हाँ।''

''खर्च किए कि नहीं खर्च किए ?''

उस ओर से प्रश्न करने पर वह मेरी ओर देखता रहा, उत्तर नहीं दिया।

''बताओ, खर्च कर दिए कि अभी हैं ?''

''जवाब में उसने एक बार 'हाँ' कहा तो दूसरी बार 'नहीं' कहा।

मैंने कहा कि तो यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हें नहीं मालूम है ?

''हाँ।''

''बेटा, मालूम है न ?''

''हाँ।''

''पतंगवाले से पैसे छुन्नू ने लिए हैं न ?''

''हाँ।''

''तुमने क्यों नहीं लिए ?''

वह चुप।

''पाँचों इकन्नी थीं, या दुअन्नी और पैसे भी थे ?''

वह चुप।

''बतलाते क्यों नहीं हो ?''

चुप।

''इकन्नियाँ कितनी थी, बोलो ?''

''दो।''

''बाकी पैसे थे ?''

''हाँ।''

''दुअन्नी नहीं थी ?''

''हाँ।''

''दुअन्नी थीं ?''

''हाँ।''

मुझे क्रोध आने लगा। डपटकर कहा कि सच क्यों नहीं बोलते जी ? सच बताओ, कितनी इकन्नियाँ थीं और कितना क्या था ?

वह गुम-सुम खड़ा रहा, कुछ नहीं बोला।

''बोलते क्यों नहीं ?''

वह नहीं बोला।

''सुनते हो। बोलो—नहीं तो .....''

आशुतोष डर गया और कुछ नहीं बोला।

''सुनते नहीं, मैं क्या कह रहा हूँ।''

इस बार भी वह नहीं बोला तो मैंने पकड़कर उसके कान खींच लिए। वह बिना आँसू लिए गुम-सुम खड़ा रहा।

''अब भी नहीं बोलोगे ?''

वह डर के मारे पीला हो आया, लेकिन बोल नहीं सका। मैंने जोर से बुलाया, ''बंसी, यहाँ आओ, इसको ले जाकर कोठरी में बंद कर दो।''

बंसी नौकर उसे उठाकर ले गया और कोठरी में मूँद दिया।

दस मिनट बाद मैंने फिर उसे पास बुलाया। उसका मुँह सूजा हुआ था। बिना कुछ बोले उसके होंठ हिल रहे थे। कोठरी में बंद होकर भी वह रोया नहीं।

मैंने कहा, ''क्यो रे, अब तो अकल आयी ?''

वह सुनता हुआ गुम-सुम खड़ा रहा।

''अच्छा, पतंगवाला कौन-सा है ?दायीं तरफ का वह चौराहेवाला ?'' उसने कुछ होठों में ही बड़बड़ा दिया, जिसे मैं कुछ न समझ सका।

''वह चौराहे वाला ?बोलो.....''

''हाँ!''

''देखो, अपने चाचा के साथ ले जाओ। बता देना कि कौन-सा है। फिर उसे स्वयं भुगत लेंगे। समझते हो न ?''

यह कहकर मैंने अपने भाई को बुलवाया। सब बात समझाकर कहा, ''देखो पाँच आने के पैसे ले जाओ। पहले तुम दूर रहना। आशुतोष पैसे ले जाकर उसे देगा और अपनी पाजेब माँगेगा। अव्वल तो वह पाजेब लौटा ही देगा, नहीं तो उसे डाँटना और कहना कि तुझे पुलिस के सुपुर्द कर दूँगा। बच्चों से माल ठगता है ?समझे! नरमी की जरूरत नहीं है।''

''और आशुतोष, अब जाओ, अपने चाचा के साथ जाओ।'' वह अपनी जगह पर खड़ा था। सुनकर भी टस-से-मस होता दिखाई नहीं दिया।

''नहीं जाओगे ?''

उसने सिर हिला दिया कि नहीं जाऊँगा।

मैंने तब उसे समझाकर कहा कि भैया, घर की चीज है, दाम लगे हैं। भला पाँच आने में रुपयों का माल किसी के हाथ खो दोगे ? जाओ, चाचा के संग जाओ। तुम्हें कुछ नहीं कहना होगा। हाँ, पैसे दे देना और अपनी चीज वापस माँग लेना। दे दे, नहीं दे तो नहीं दे, तुम्हारा इससे सरोकार नहीं। सच है न, बेटे! अब जाओ।

पर वह जाने को तैयार नहीं दीखा। मुझे उस लड़के की गुस्ताखी पर बड़ा बुरा मालूम हुआ। बोलो, इसमें बात क्या है ? इसमें मुश्किल कहाँ है ? समझाकर बात कर रहे हैं सो समझता ही नहीं, सुनता ही नहीं।

मैंने कहा कि क्यों रे, नहीं जाएगा।

उसने फिर सिर हिला दिया कि नहीं जाऊँगा।

मैंने प्रकाश, अपने छोटे भाई को बुलाया। कहा, ''प्रकाश, इसे पकड़-कर ले जाओ।''

प्रकाश ने उसे पकड़ा और आशुतोष अपने हाथ-पैरों से उसका प्रतिकार करने लगा। वह साथ

जाना नहीं चाहता था।

मैंने अपने ऊपर बहुत सब्र करके फिर आशुतोष को पुचकारा, कहा कि जाओ भाई ? डरो नहीं। अपनी चीज़ घर में आएगी। इतनी-सी बात समझते नहीं। प्रकाश, इसे गोदी में ले जाओ और जो चीज माँगे इसे बाजार से दिलवा देना। जाओ भाई, आशुतोष!

पर उसका मुँह फूला हुआ था। जैसे-तैसे बहुत समझाने पर वह प्रकाश के साथ चला। ऐसे चला मानों पैर उठाना उसे भारी हो रहा हो। आठ बरस का लड़का होने आया फिर भी देखो न किसी भी बात की उसमें समझ नहीं है। मुझे जो गुस्सा आया तो क्या बतलाऊँ। लेकिन यह याद करके कि गुस्से से बच्चे संभलने की जगह बिगड़ते हैं, मैं अपने को दबाता चला गया। खैर, वह गया तो मैंने चैन की साँस ली।

लेकिन देखता क्या हूँ कि कुछ देर में प्रकाश लौट आया। मैंने पूछा, ''क्यों ?''

बोला कि आशुतोष भाग गया है।

मैंने कहा कि अब वह कहाँ है ?

''वह रूठा खड़ा है, घर में नहीं आता।''

''जाओ पकड़कर तो लाओ।''

वह पकड़ा हुआ आया, मैंने कहा, ''क्यों रे, तू शरारत से बाज नहीं आएगा ? बोल, जाएगा कि नहीं ?''

वह नहीं बोला तो मैंने कसकर उसे दो चाँटे दिए। थप्पड़ लगते ही वह एकदम चीखा, पर फौरन चुप हो गया। वह वैसे ही मेरे सामने खड़ा रहा।

मैंने उसे देखकर मारे गुस्से से कहा कि ले जाओ इसे मेरे सामने से। जाकर कोठरी में बंद कर दो। दुष्ट!

इस बार वह आध-एक घंटे बंद रहा। मुझे ख्याल आया कि मैं ठीक नहीं कर रहा हूँ लेकिन जैसे कि दूसरा रास्ता नहीं दीखता था। मार-पीटकर मन को ठिकाना देने की आदत पड़ गई थी, और कुछ अभ्यास न था।

खैर, मैंने इस बीच प्रकाश को कहा कि तुम दोनों पतंगवालों के पास जाओ। मालूम करना कि पाजेब किसने ली है। होशियारी से मालूम करना। मालूम होने पर सख्ती करना। मुरब्बत की जरूरत नहीं। समझे ?

प्रकाश गया पर लौटने पर बताया कि किसी के पास पाजेब नहीं है।

सुनकर मैं झल्ला आया, कहा कि तुमसे कुछ काम नहीं हो सकता। जरा-सी बात नहीं हुई, तुमसे क्या उम्मीद रखी जाए ?

वह अपनी सफाई देने लगा। मैंने कहा, ''बस तुम जाओ।''

प्रकाश मेरा बहुत लिहाज मानता था। वह मुँह डालकर चला गया। कोठरी खुलवाने पर आशुतोष को फर्श पर सोते पाया। उसके चेहरे पर अब भी आँसू नहीं थे। सच पूछो तो मुझे उस समय बालक पर करुणा हुई। लेकिन आदमी में एक ही साथ जाने क्या-क्या विरोधी भाव उठते हैं।

मैंने उसे जगाया। वह हड़बड़ाकर उठा मैंने कहा, ''कहो, क्या हालत हैं ?''

थोड़ी देर तक वह समझा ही नहीं। फिर शायद पिछला सिलसिला याद आया। झट उसके चेहरे पर वही जिद, अकड़ और प्रतिरोध के भाव दिखाई देने लगे।

मैंने कहा कि या तो राजी-राजी चले जाओ, नहीं तो इस कोठरी में फिर बंद किए देते हैं।

आशुतोष पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा हो ऐसा नहीं मालूम हुआ।

खैर, उसे पकड़कर लाया और समझाने लगा। मैंने निकालकर उसे एक रुपया दिया और कहा, ''बेटा, इसे पतंगवाले को देना और पाजेब माँग लेना। कोई घबराने की बात नहीं। तुम तो समझदार लड़के हो।''

उसने कहा कि जो पाजेब उसके पास नहीं हुई तो कहाँ से देगा ?

''इसका क्या मतलब, तुमने कहा न कि पाँच आने में पाजेब दी है। न हो छन्नू को भी साथ ले लेना। समझे!''

वह चुप हो गया। आखिर समझाने पर जाने को तैयार हुआ। मैंने प्रेमपूर्वक उसे प्रकाश के साथ जाने को कहा। उसका मुँह भारी देखकर डाँटने वाला ही था कि इतने में सामने उसकी बुआ दिखाई दी।

बुआ ने आशुतोष के सिर पर हाथ रखकर पूछा कि कहाँ जा रहे हो, मैं तो तुम्हारे लिए केले और मिठाई लाई हूँ।

आशुतोष का चेहरा रूठा ही रहा। मैंने बुआ से कहा कि उसे रोको मत, जाने दो। आशुतोष रुकने को उद्यत था। वह चलने में आनाकानी दिखाने लगा।

बुआ ने पूछा, ''क्या बात है ?''

मैंने कहा, ''कोई बात नहीं, जाने दो न उसे।''

पर आशुतोष मचलने पर आ गया था। मैंने डाँटकर कहा, ''प्रकाश, इसे ले क्यों नहीं जाते हो ?''

बुआ ने कहा कि बात क्या है ? क्या बात है ?

मैंने पुकारा, ''बंसी– तू भी साथ जा। बीच से लौटने न पावे।'' सो मेरे आदेश पर दोनों आशुतोष को जबरदस्ती उठाकर सामने से ले गए।

बुआ ने कहा, ''क्यों उसे सता रहे हो ?''

मैंने कहा कि कुछ नहीं, ज़रा यों ही.....।

फिर मैं उनके साथ इधर-उधर की बातें ले बैठा। राजनीति राष्ट्र की ही नहीं होती, मुहल्ले में भी राजनीति होती है। यह भार स्त्रियों पर टिकता है। कहाँ क्या हुआ, क्या होना चाहिए, इत्यादि चर्चा स्त्रियों को लेकर रंग फैलाती है। इसी प्रकार की कुछ बातें हुई, फिर छोटा-सा बक्सा सरकाकर बोलीं, इसमें वे कागज हैं जो तुमने माँगे थे और यहाँ .....''

यह कहकर उन्होंने अपनी बास्कट की जेब से हाथ डालकर पाजेब निकालकर सामने की, जैसे सामने बिच्छू हो। मैं भयभीत भाव से कह उठा कि यह क्या ?

बोली कि उस रोज भूल से यह पाजेब मेरे साथ चली गई थी।

शब्दार्थ–

घड़ी–भर – थोड़ा समय / शहजोर – बलवान / बरजते – मना करना / शह – उकसाना, बढ़ावा देना / इज़ाज़त – स्वीकृति / आतंक – भय / अपराध वृत्ति – गलत कार्य करने की आदत / सुघड़ – सुन्दर / मनसूबा – इरादा / उग्रता – तेज, भंयकरता / भयावह – भयंकर / आश्वासन – तसल्ली / सांत्वना – तसल्ली / क्षोभ – गुस्सा / सहूलियत – सुविधा / बखेड़ा – झगड़ा / सरोकार – सम्बन्ध, वास्ता / प्रतिकार – प्रतिशोध, बदला, विरोध / मुरव्वत – शील, संकोच / प्रतिरोध – विरोध, बाधा / उद्यत – तैयार / आदेश – आज्ञा / सुबुक – सुन्दर, हल्का / बलैयाँ लेना – किसी का संकट अपने ऊपर लेने की कामना करना / इनाम – पुरस्कार / वंचित – खोना / इलज़ाम – दोष / ताड़ना – समझना / हर्ष – प्रसन्नता / कबूल – स्वीकार करना।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. जैनेन्द्र किस प्रकार के कथाकार के रूप में प्रसिद्ध हैं–
   (क) मनोवैज्ञानिक कथाकार (ख) आँचलिक कथाकार
   (ग) प्रगतिवादी कथाकार (घ) ऐतिहासिक कथाकार ( )
2. 'पाजेब' कहानी किस पृष्ठभूमि पर लिखी गई है–
   (क) बाल-मनोविज्ञान (ख) पौराणिक
   (ग) हास्य व्यंजक (घ) मनोविश्लेषण ( )
3. आशुतोष को उसकी बुआ ने जन्मदिन पर क्या देने का वादा किया ?
   (क) पतंग (ख) बाइसिकल
   (ग) पाजेब (घ) मिठाई ( )
4. 'पाजेब' कहानी किस शैली में लिखी गई है –
   (क) डायरी शैली (ख) आत्मकथात्मक शैली
   (ग) व्यास शैली (घ) व्यंग्य शैली ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. श्रीमती जी 'पाजेब' चुराने का संदेह किस पर करती हैं ?
2. छुन्नू की माँ छुन्नू को क्यों पीटती है ?
3. मुन्नी को पाजेब किसने, किस दिन लाकर दी ?
4. पूछताछ में आशुतोष ने पाजेब किसको बेचने की बात कही ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. आशुतोष निरपराध होते हुए भी पाजेब चुराने की बात क्यों स्वीकार कर लेता है ?
2. लेखक ने आशुतोष को कोठरी में क्यों बन्द कर दिया ?
3. बातों-बातों में लेखक को क्या पता लगा ? जिससे वह आशुतोष पर पाजेब चुराने का

संदेह करने लगता है ?

4. पाजेब कैसे मिलती है ? पाजेब मिलने पर लेखक की प्रतिक्रिया को व्यक्त कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. कहानी के संवाद स्वाभाविक, रोचक, सशक्त, नाटकीय और संक्षिप्त हैं। उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

2. 'पाजेब' कहानी कलात्मक दृष्टि से सफल है ? अपने शब्दों में लिखिए।

3. 'पाजेब' कहानी में बाल-मनोविज्ञान का सजीव परिचय मिलता है। इस कथन पर प्रकाश डालिए।

4. 'पाजेब' कहानी की मूल संवेदना पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

5. पाठ में आए निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

(क) ''मेरे मन में उस समय ..... दबाना ठीक नहीं है।''

(ख) ''मुझे यह एक भारी ..... भयावह हो सकती है।''

(ग) ''बच्चे में चोरी की ..... नहीं हो सकते।''

(घ) ''राजनीति राष्ट्र ..... रंग फैलाती है।''

•••